डूबने से हुई मौत का गवाह - डायटम

डॉ. राजेश सिंह एवम् डॉ. आर.बी. सिंह

मानव का पानी के साथ सदैव सान्निध्य रहा है। पीने के लिए, नहाने के लिए, सिंचाई के लिए अर्थात् जीवन के हर क्षेत्र में इसकी नितान्त आवश्यकता महसूस की जाती है। समुद्र द्वारा दो तिहाई घिरी पृथ्वी पर नदियाँ व सरोवर भी प्रचुर संख्या में है। जहाँ एक तरफ जल ही जीवन है वहीं इसकी प्रचुर उपलब्धता विभिन्न प्रकार की दुर्घटनाओं से भी जुडी है। अपना देश स्नान-पर्वो का देश है। यहाँ मकर संक्रान्ति, कुम्भ पर्व, कार्तिक व माघ पूर्णिमा, चन्द्र व सूर्य ग्रहण आदि अवसरों पर लाखों लोग नदियों व सरोवरों में स्नान करते हैं। इसमें अधिकांशत: उनकी संख्या होती है, जो तैरना नहीं जानते। इस कारण ऐसे लोग कभी-कभी दुर्घटनावश डूब जाते है। प्रतिमाओं के विसर्जन के दौरान भी दुर्घटनाएँ हो जाती है। इसके अतिरिक्त बस, ट्रेन, नाव आदि की दुर्घटनाये भी यदाकदा हो जाती है। अभी 18 नवम्बर, 1997 को दिल्ली में एक हृदय विदारक दुर्घटना में स्कूली बच्चों से भरी बस यमुना नदी में गिर गई जिसमे लगभग 30 बच्चे डूब गए। 13 दिसम्बर, 1997 को चुनार (उ.प्र.) के पास गंगा नदी मे नाव पलटने से 38 व्यक्ति डूब गये। प्राय: इस प्रकार की दुर्घटनाओं में डूबे सभी व्यक्तियों के शव प्राप्त नहीं हो पाते। ऐसी दशा में शव पानी के बहाव के साथ काफी दूर अन्य शहरों तक भी पहुँच जाते हैं। जहाँ जाँच में कठिनाई उत्पन्न होती है। इसके अतिरिक्त, प्राय: यह सुनने को मिलता है कि नदी-तालाब आदि में किसी ने छलांग लगाकर आत्महत्या कर ली। विशेष रूप से, अपने देश का सामाजिक व आर्थिक ढाँचा भी इस प्रकार का है, जो इस प्रवृत्ति को बढावा देता है। अपने प्रदेश के पूरब अचल के लोकगीतों तक में इसका जिक्र आया है, जिसमें गृहणियाँ आभूषणों के लिए या सास, ननद से तंग आकर ताल-तलैया या कुएं में डूबने की बात करती हैं। इसका कारण शायद यही रहा होगा कि ताल-पोखरे प्रत्येक गाँव में होते ही हैं। कुए तो अक्सर घर के सामने ही होते हैं।

सारे बडे शहर नदियों के किनारे ही बसे हैं। ऐसे में डूबना, निराश व कुंठित व्यक्तियों के लिए जीवन से पीछा छुडाने का आसान तरीका होता है। विभिन्न प्रकार की नशीली दवाएं, विष व कीटनाशक पदार्थो को खाकर मरने वालों की तरह डूबकर आत्महत्या करने वालों की सख्या भी कम नहीं है। सम्भवत: इसका कारण यही है कि आत्महत्या से प्रेरित व्यक्ति अपनी सोच को आवेशवश शीघ्रातिशीघ्र परिणित करना चाहता है। हर जगह उपलब्ध ये जलस्रोत इसमें उत्प्रेरक की भूमिका निभाते हैं। हिन्दू समाज मे, विशेष रूप से उत्तर भारत में, तो बच्चों, साधु-सन्त, कोढ, चेचक तथा सर्प काटने से मृत व्यक्तियों के शवों को भी संस्कारवश नदियों में प्रवाहित करने का प्रचलन है। अपराधियों के लिए भी यह आसान तरीका होता है कि किसी की हत्या करने, गला घोंट देने, दम घोंट देने या जहर देने के उपरान्त उसे नदी-नाले आदि में फेक देते है। वैज्ञानिकों के अनुसार ऐसे मामलों की संख्या 20 प्रतिशत से अधिक ही होती है। अक्सर ऐसी भी घटनाएं प्रकाश में आती हैं जिसमें जमीन, जायदाद के वारिस होने के कारण मासूम बच्चे इस प्रकार की दुर्भावना के शिकार हो जाते हैं। वास्तव में जलस्रोतों में डूबने से हुई मृत्यु एक सामान्य बात है। विगिन्स व लूक (1970) के अनुसार अमेरिका में कुल वार्षिक दुर्घटनावश मृत्यु का 7 प्रतिशत डूबकर मरने से होती है, जो कि दुर्घटना के मुख्य कारणों मे चतुर्थ स्थान रखता है। लेब्रून (1972) ने फ्रांस में 2000 प्रतिवर्ष व्यक्तियों के डूबकर मरने की बात कही है। जिसमें एक चौथाई संख्या 5 वर्ष तक के आयु के बच्चों की होती है। होम आफिस (1979) के अनुसार 1975-77 की अवधि में इंग्लैण्ड/वैल्स में 2800 व्यक्ति डूबे थे। भट्टाचार्जी व अन्य (1996) द्वारा दिल्ली में 3623 अप्राकृतिक मौतों के अध्ययन में 113 मौतें डूबकर मरने से हुई पायी गयीं, अप्राकृतिक कारणों में जिसका सातवाँ स्थान था। डॉ. श्रीवास्तव व अन्य (1987) ने वाराणसी में डूबने से हुई मौत के बारे में अक्टूबर, 1982 से सितम्बर 1983 तक एक साल की अवधि का अध्ययन किया, उन्होंने पाया कि डूबने से हुई मृत्यु के कुल 42 मामलों में महिलाएं सर्वाधिक, 25 थीं जबकि पुरुष 17। डूबने वालों मे सबसे ज्यादा (31 प्रतिशत), 21-30 वर्ष आयु वर्ग के थे। एक और रोचक जानकारी उन्होंने दी कि इनमें 37 हिन्दू, 3 मुस्लिम व 2 अन्य थे। हिन्दुओं में 23 दुर्घटना के शिकार हुए थे तथा 8 आत्महत्या किये थे, जबकि मुस्लिम मृतको मे आत्महत्या का एक भी मामला नहीं पाया गया। डॉ. श्रीवास्तव के अनुसार यह अन्तर धार्मिक भावना के कारण है।

डॉ. राजेश सिंह, एम.एससी., पीएच.डी., वैज्ञानिक, विधि विज्ञान प्रयोगशाला, उत्तर प्रदेश, लखनऊ। डॉ. सिंह ने विभिन्न राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक पत्रिकाओं में लगभग 20 शोध पत्र एवं लोकप्रिय लेख प्रकाशित किया है। इन्होंने अनेक वैज्ञानिक सम्मेलनों में भी भाग लिया है।

डॉ. आर.बी. सिंह, निदेशक, विधि विज्ञान प्रयोगशालाये, उ.प्र.।

लखनऊ में जुलाई/अगस्त 1997 में डूबने से हुई 14 मौतें प्रकाश में आई थीं। 26 जून, 1997 की घटना है, वरिष्ठ आई.ए.एस. अधिकारी एवं अपट्रान के प्रबन्ध निदेशक श्री अशोक कुमार शाम को साढ़े सात बजे अपने बटलर पैलेस (लखनऊ) आवास से टहलने के लिए बाहर निकले थे और दूसरे दिन सुबह लगभग 10 बजे उनकी लाश कालोनी के बड़े तालाब में तैरती पायी गयी। पोस्टमार्टम रिपोर्ट में मौत डूबने से हुई बतायी गयी। किन्तु कालोनी एवं राजधानी के समाचार पत्रों में यह चर्चा का विषय था कि मुश्किल से कमर तक पानी वाले तालाब में कैसे डूबा जा सकता है? मृतक के भाई ने जालंधर ले जाकर फिर से पोस्टमार्टम कराने तक की बात कही। उन्हें शक था, कहीं यह मामला हत्या का तो नहीं है?

इस प्रकार आए दिन जलस्रोतों से ज्ञात-अज्ञात शव बरामद होते ही रहते हैं। ऐसे मामलों में इस बात की प्राकृतिक जिज्ञासा होती है कि :

- क्या व्यक्ति की मृत्यु वास्तव में डूबकर ही हुई या उसकी हत्या कर पानी में फेंक दिया गया था।
- यदि डूबकर हुई है तो, वास्तविक घटनास्थल क्या था? कभी-कभी शव पानी के बहाव के साथ घटनास्थल से काफी दूर चले जाते हैं।
- डूबकर हुई मृत्यु की दशा में मृत्यु का वास्तविक कारण, जैसे- हत्या, आत्महत्या या दुर्घटना।

डूबकर हुई मृत्यु की दशा में हत्या, आत्महत्या या दुर्घटना का पता लगाना अति आवश्यक हो जाता है ताकि अपराध की जटिल गुत्थी सुलझाई जा सके। वास्तव में इसका पता सिर्फ पारिस्थितिक साक्ष्य के आधार पर ही लगाया जा सकता है। यद्यपि किसी व्यक्ति के द्वारा किसी को डुबोकर मार डालने की घटनाएं कम होती हैं, तथापि शिशु एवं बच्चे ऐसी दुर्भावना के शिकार हो सकते हैं। मृतक के हाथ-पैर बंधा होना, शरीर के साथ वजनी पत्थर आदि का बंधा होना, कम गहरे पानी में शव का पाया जाना तथा शरीर पर चोटों के निशान आदि का होना, हत्या किया जाना, प्रमाणित करता है। आत्महत्या से सम्बन्धित लिखे नोट, जलस्रोत के किनारे ढंग से रखे चप्पल, कपड़े व अन्य सामान आदि की उपस्थिति आत्महत्या दर्शाती है। दुर्घटनावश डूबना प्राय: गहरे पानी में ही होता है। साधारणतया इसके शिकार वे होते हैं, जो तैरना नहीं जानते या फिर मिरगी जैसे रोग से ग्रसित व्यक्ति। जलस्रोत के किनारे पर नहाने, कपड़े धोने, मछली मारने की सामग्री, शराब की पाउचं, गिलास आदि का होना तथा पेट में शराब का पाया जाना दुर्घटनावश हुई मौत इंगित करता है।

यदि शव, सड़न की प्रक्रिया शुरू होने के पूर्व प्राप्त हो जाये तो यह बताना बहुत कठिन नहीं है कि व्यक्ति की मृत्यु डूबकर ही हुई या पूर्व में हो चुकी थी। वास्तव में जब व्यक्ति डूबता है तो जलीय माध्यम अपने घटको के साथ तेजी से फेफड़े में प्रवेश करता है जिससे फेफड़े की कोशिकाएं क्षतिग्रस्त हो जाती है। फलस्वरूप भौतिक व जैव रासायनिक परिवर्तन होते हैं। डूबने के बारे में मत निर्धारण हेतु इनका परीक्षण निम्नलिखित आधार पर किया जाता है।

बाह्य परीक्षण

- शव के नाक व मुँह से सफेद झागदार पदार्थ निकला रहता है।
- हाथ की मुट्ठी बन्द होती है जिसमें कोई वस्तु जैसे मिट्टी, बालू व खरपतवार आदि होता है।

शारीरिक व औतिकी परीक्षण

- श्वासनली व फेफड़े में रक्त की आभा लिए सफेद झागदार पदार्थ भरा रहता है।
- प्राय: फेफड़े पानी भरने से फूल कर बड़े हो जाते हैं, अत: उनके बाहरी सतह पर पसलियों की छाप अक्षत हो जाती है।
- फेफड़े के अन्दर वायु कोष्ठक की दीवारें फट जाती है।
- पेट व छोटी आँत में पानी, मिट्टी, रेत व छोटे प्लवकों की उपस्थिति पायी जाती है।

रक्त का जैव-रासायनिक परीक्षण

यह परीक्षण बाह्य, शारीरिक, औतिकी परीक्षण से अच्छा व विश्वसनीय माना जाता है।

- नदी व तालाब जैसे सादे पानी में रक्त 50 प्रतिशत तक तनु हो जाता है। ऐसे में रुधिर कणिकाएं फटने लगती है (हीमोलिसिस), प्लाज्मा प्रोटीन, सोडियम क्लोराइड, मैग्नीशियम एवं अन्य आयनों की सान्द्रता कम हो जाती है।
- लगभग इसके विपरीत समुद्र में डूबने वाले मामलों में रक्त की सान्द्रता बढ़ जाती है क्योंकि समुद्री जल में 3.5 प्रतिशत लवण होते हैं। समुद्री जल के परासरणीय दाब अधिक होने के कारण सोडियम क्लोराइड, मैग्नीशियम जैसे आयन, व प्लाज्मा प्रोटीन की सान्द्रता बढ़ जाती है फलस्वरूप **'पल्मोनरी इडीमा'** स्पष्ट दिखता है।

इस संदर्भ में अमेरिकी वैज्ञानिक गेटलर (1921) की खोज महत्वपूर्ण है। डूबने से हुई मृत्यु के मामले में उन्होंने हृदय के दांये व बायें भाग के रक्त में क्लोराइड की मात्रा में उल्लेखनीय अन्तर पाया, जबकि साधारण दशा में दोनों भागों के रक्त में लवणों की मात्रा समान होती है। इसका कारण यह बताया कि डूबने की दशा में जलीय माध्यम फेफड़े से होते हुए हृदय के बायें भाग में पहुँचता है। स्पष्ट है कि यदि माध्यम समुद्री जल है तो हृदय के बायें भाग में क्लोराइड की मात्रा दायें भाग की अपेक्षा काफी अधिक (19 से 294 मि.ग्रा./100 सी.सी.) होगी, जबकि नदियों व तालाबों के मामलों में यह काफी कम होगी। परन्तु गेटलर का यह परीक्षण तभी सफल होगा जब शव 12 घंटे के अन्दर बरामद कर लिया जाय (टिम्परमैन, 1972)।

उपरोक्त परीक्षणों के आधार पर डूबकर हुई मृत्यु के बारे में जानकारी दी जा सकती है। लेकिन सिर्फ एक परीक्षण के आधार पर निश्चित मत नहीं दिया जा सकता, क्योंकि कभी-कभी दूसरे कारणों से हुई मृत्यु में भी उपरोक्त लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त दूसरी समस्या यह है कि डूबकर हुई मृत्यु और शव बरामदगी तक, काफी समय नष्ट हो जाता है। उपरोक्त विधियाँ तभी सफल हो सकती है जब कम से कम समय के अन्दर इनका परीक्षण कर लिया जाय।

वास्तव में डूबने के मामलों में निश्चित अभिमत देना आसान कार्य नहीं है। यह एक ऐसी समस्या है, जिसको लेकर पूरे विश्व के न्यायालयिक वैज्ञानिक एक लम्बे अर्से से परेशान रहे हैं। दुर्भाग्यवश, प्राय: शव घटना के कई दिनों पश्चात् प्राप्त होते हैं। यह विलम्ब ही मुख्य कारण है जिससे डूबकर हुई मौत के बारे में ठोस अभिमत दे पाना कठिन हो जाता है। हफ्तों-महीनों तक पानी में पड़े रहने से शव बुरी

तरह से सड़ जाते हैं। कभी-कभी तो ज्यादा सड़ जाने से मात्र कुछ कंकाल ही शेष बचे रहते हैं। ऐसी दशा में शारीरिकी, औतिकी व जैव रासायनिक लक्षण समाप्त हो चुके रहते हैं। अत: उपरोक्त परम्परागत परीक्षणों द्वारा सही कारण जान पाना कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव हो जाता है।

उक्त विषम परिस्थिति में हम **डायटम** के आभारी हैं जो अंधेरे में हमें एक नई रोशनी दिखाता है। सर्वप्रथम सन् 1896 में हाफमैन ने शवविच्छेदन के पश्चात फेफड़ों में डायटम को देखा, परन्तु फेफडों में डायटम की उपस्थिति व डूबकर हुई मृत्यु में सम्बन्ध स्थापित करने का श्रेय रेवेनस्टार्फ (1904) को जाता है। यह पहले वैज्ञानिक थे जिन्होंने डूबने के मामले में डायटम को 'पहचान सूचक' के रूप में अपनाया। उन्होंने यह भी कहा कि सम्भव है कि जलीय माध्यम के कुछ प्लवक फेफड़ों द्वारा रक्त में भी चले जाते हों परन्तु दुर्भाग्यवश वे रक्त से डायटम प्राप्त नहीं कर सके। इन्जे ने 1942 में सर्वप्रथम फेफड़े के अतिरिक्त अन्य अंगों में भी डायटम पाया एवं डूबने से हुयी मृत्यु से इसका सम्बन्ध स्थापित किया। तमास्का ने 1949 में डूबकर मरे लोगों के अन्य अंगों के साथ अस्थिमज्जा में भी डायटम देखा। जबकि अन्य कारणों से मरे लोगों के अस्थिमज्जा में डायटम नहीं दिखे। तमास्का ने डायटम परीक्षण हेतु अस्थिमज्जा के ऊतकों को अति उपयुक्त बताया, विशेष रूप से जंघास्थि में। तत्पश्चात् इस दिशा में अनेक वैज्ञानिकों ने शोध कार्य करना प्रारम्भ किया। काफी अच्छे परिणाम भी सामने आये। वास्तव में यह इसके विकास का उदयकाल था। सन् 1961 में रस्टन ने इस अन्वेषित तकनीक को न्यायालयिक विज्ञान के क्षेत्र में एक बहुत बड़ी उपलब्धि बतायी। गार्डन (1972) व टिम्परमैन (1972) जैसे वैज्ञानिकों ने तो अन्य परीक्षणों के उपरान्त भी डायटम परीक्षण करने की सलाह दी है एवं इसे विश्वसनीय माना है। पीबॉडी (1980), हेन्डी (1973), एवम् आयर (1991) जैसे वैज्ञानिकों ने डायटम परीक्षण को तर्कसंगत बनाने की दिशा में काफी शोध व विकास कार्य किए एवं इस परीक्षण की काफी विशद व्याख्या भी की। पैकर व कैमरान (1993) ने ऊतक के साथ जलीय माध्यम में भी डायटम की मात्रात्मक व गुणात्मक विश्लेषण करने की सलाह दी है। वर्ष 1996 में लूड्स व सहयोगियों ने डायटम की प्रबल गवाही की काफी प्रशंसा की। इस शोध पत्र में उन्होंने इसकी विश्वसनीयता व प्रयोजनीयता को सुदृढ़ करने हेतु जलस्रोतों के पानी का समय-समय पर विश्लेषण कर एक आँकड़ा-आधार तैयार करने की सलाह दी है ताकि ऊतक में पाये गये डायटम से इसका तुलनात्मक अध्ययन कर डूबने से हुई मृत्यु एवं सम्भावित घटनास्थल के बारे में त्रुटिरहित ठोस अभिमत दिया जा सके। वर्ष 1997 में पोलानेन ने इस महत्वपूर्ण विधि की क्षमता को 'उपयोगिता' एवं 'प्रामाणिकता' (वैधता) की कसौटी पर तर्कपूर्ण ढंग से मूल्यांकित किया है। इन्होंने 52 डूबने के मामलों में अस्थिमज्जा (जंघास्थि) व सम्भावित डूबने के जलीय माध्यम की परीक्षण कार्य में 47 मामलों (90 प्रतिशत) में ऊतक व घटनास्थल के डायटम के आकार व प्रकार में समानता पायी। ऐसे डायटम जो ऊतक व संगत स्थान के जलीय माध्यम दोनों में हों को पोलानेन ने **'ड्राउनिंग ऐसोसिएटेड डायटम्स'** की संज्ञा दी है।

स्पष्ट है कि जिन परिस्थितियों में डायटम हमें जलस्रोतों से प्राप्त शवों के रहस्य के बारे में साक्ष्य देता है, इसका कोई विकल्प नहीं है। यही कारण है कि लगभग एक शताब्दी से वैज्ञानिक इस पर भरोसा करके विभिन्न प्रकार के शोध व विकास कार्यों में लगे हैं एवं इस **'न्यायालयिक डायटम विज्ञान'** (फोरेन्सिक डायटोमोलोजी) को और उपयोगी व मजबूत बनाने की दिशा में अग्रसर हैं।

डायटम क्या है

डायटम अत्यंत सूक्ष्म, एक कोशिकीय पादप (वर्ग-बेसिलेरियोफाइसी) प्लवक हैं। जो संसार के लगभग सभी जलस्रोतों में पाये जाते हैं। ये एक प्रकार के हरे शैवाल है जिसे हम सिर्फ सूक्ष्मदर्शी की सहायता से देख सकते हैं। अन्य हरे पौधों की भांति इनमें भी पर्णहरिम होता है जिसकी सहायता से ये सूर्य की रोशनी में प्रकाश संश्लेषण क्रिया द्वारा अपना भोजन स्वयं बनाते

गोमती नदी (लखनऊ) में पाये जाने वाले कुछ डायटम

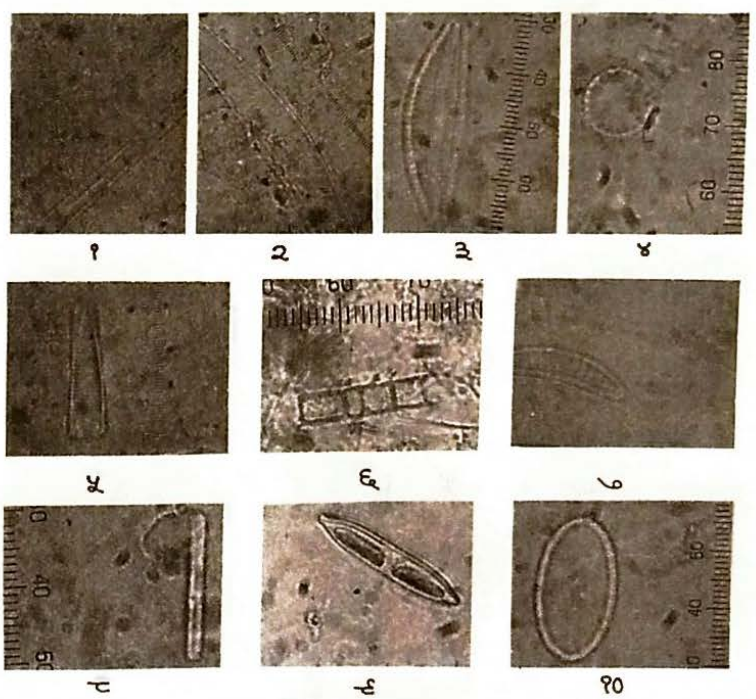

चित्र संख्या- १.

१.सिनेड्रा, २. यूनोशिया, ३. एम्फोरा, ४. साइक्लोटेला, ५. गोम्फोनीमा, ६.मिलोसाइरा, ७. एक्नैन्थस, ८.निश्चिया, ९. नेविकुला, १०. सूरीरेला.

हैं। इनकी लगभग 15000 जातियां पायी जाती हैं जिनमें से औसतन आधी समुद्र में व शेष सादे पानी के जलस्रोतों, जैसे नदी, तालाब आदि में पाये जाते हैं। एक लीटर पानी मे लगभग 10 करोड डायटम हो सकते हैं। इससे हम इनके प्रचुर संख्या में पाये जाने का अनुमान लगा सकते हैं। ये अकेले अथवा समूह में देखे जा सकते हैं। ये आकार में लम्बे, गोल या पत्तीनुमा होते हैं। चित्र संख्या-1 में गोमती नदी (निशातगंज, डालीगंज, गोमती बैराज) में सामान्य रूप से पाये जाने वाले कुछ डायटम दर्शाए गए हैं। इनकी लम्बाई 2 माइक्रान से 1 मिलीमीटर तक हो सकती है। इसकी सतह पर सिलिका की मजबूत पर्त होती है जिस पर स्पष्ट द्विपार्श्वीय या अरीय धारियाँ होती हैं। जिसके कारण ये बडी सरलता से पहचाने जा सकते हैं। डायटम, साबुनदानी की भाँति दो बराबर भागों के जुडने से बना होता है। ग्रीक भाषा में डायटम का अर्थ ही होता है जिसे दो बराबर भागों में काटा जा सके।

डायटम की विशेषता

डायटम की सबसे बडी विशेषता इसकी बाह्य सतह पर सिलिका की मजबूत पर्त का होना है। जिसे 'फ्रूस्टूल' कहते हैं। यह पर्त रासायनिक क्रिया के दृष्टिकोण से उदासीन होती है। अत: इन पर अम्ल, क्षार, पाचक रस अथवा शव के सड़ने का प्रभाव नहीं पडता है। अत्यधिक रूप से सड़े शव के ऊतकों में भी ये विद्यमान होते हैं। इसकी इसी विशेषता के कारण न्यायालयिक वैज्ञानिकों का ध्यान इसकी तरफ आकर्षित हुआ, जिन्होंने 'पहचान सूचक' के रूप में इसका प्रयोग किया।

डायटम परीक्षण का सिद्धान्त

जब कोई व्यक्ति डूबता है तो पानी के साथ डायटम भी बड़ी तेजी से फेफड़े में प्रवेश करते हैं। फेफड़े में पानी के अत्यधिक दबाव के कारण वायुकोष्ठकों की दीवारें फट जाती हैं। फलस्वरूप पानी के साथ डायटम रक्त केशिकाओं के सम्पर्क मे आकर फुफ्फुसीय शिराओं द्वारा हृदय के बाये अलिंद मे पहुँचते हैं। यहाँ से यह हृदय के धडकते ही सारे अंगों जैसे यकृत, वृक्क, तिल्ली, मस्तिष्क, व अस्थिमज्जा आदि मे पहुँच जाते हैं। अत: इन अंगों में डायटम का पाया जाना ही डूबने का साक्ष्य होता है। इसके विपरीत मार कर फेंके गये शव में चूँकि जीवन के लिए कोई संघर्ष नहीं होता, अत: बिना किसी दाब के निश्चेष्ट भाव से बहुत ही कम संख्या में डायटम पानी के साथ फेफडे/आमाशय तक ही पहुँच पाते हैं। फेफडे में न तो वायु कोष्ठकों की दीवारे फटती हैं और न ही निश्चल हृदय मे स्पदन होता है। इस कारण डायटम अन्य किसी भी अंग में नहीं पहुँच पाते, जैसा कि चित्र संख्या-2 में दर्शाया गया है।

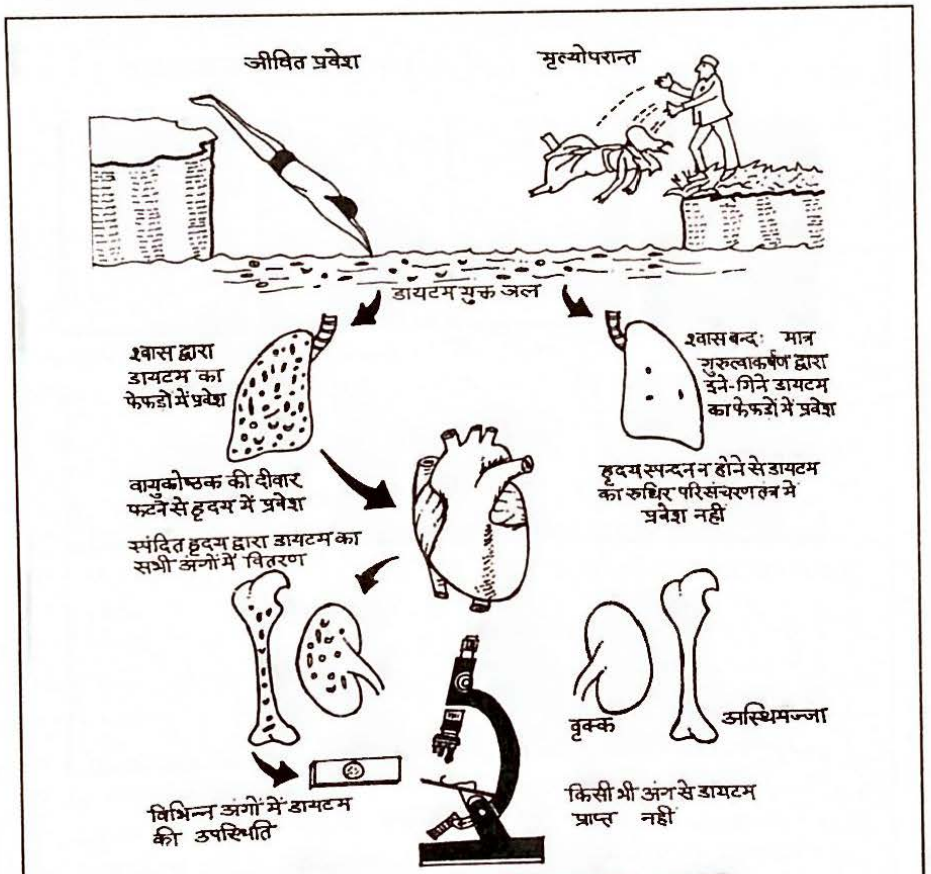

चित्र संख्या-2. डूबने का गवाह - डायटम

डायटम परीक्षण की विधि

डायटम परीक्षण प्रक्रिया के दौरान ऊतकों से इसे अलग करना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। इसमें अत्यधिक अनुभव एवं प्रवीणता की आवश्यकता होती है। प्राय: परीक्षण हेतु शव के फेफडे, वृक्क, यकृत, मस्तिष्क एवं अस्थिमज्जा के ऊतक लिये जाते हैं। तुलनात्मक अध्ययन हेतु संगत स्थान से 2 लीटर पानी भी लिया जाता है। पानी या फेफडे से लिए गए द्रव से डायटम का पृथक्करण ऊतकों की अपेक्षाकृत सरल एवं कम समय में ही हो जाता है।

ऊतकों एवं पानी से डायटम को पृथक करने की अनेक विधियां वैज्ञानिको द्वारा समय-समय पर प्रयोग में लायी गयी हैं।

1 **अम्ल पाचन विधि (एसिड डाइजेशन)** : यह एक प्राचीन एवं परम्परागत विधि है। इसमें ऊतकों को महीन काटकर/पीसकर सान्द्र सल्फ्यूरिक या नाइट्रिक अम्ल के साथ जेल्डाल फ्लास्क में ऊतकों के घुलने तक उबाला जाता है। फलस्वरूप सभी जैविक पदार्थ आक्सीकृत होकर घुल जाते हैं जबकि डायटम अति कठोर सिलिका की दीवारों से ढके होने के कारण अप्रभावित रहते हैं। इस विलयन को ठंडा करने के पश्चात परखनली में रखकर सेन्ट्रीफ्यूज मशीन द्वारा अम्ल को अलग कर फेंक देते हैं।

परसनली के नीचे सतह पर जमे पदार्थ को पुन सेन्ट्रीफ्यूज मशीन की सहायता से 2-3 बार आसुत जल में तथा अन्त मे डायक्जेन से धोया जाता है। स्लाइड पर, नीचे सतह पर जमे उक्त पदार्थ का आरोपण डी पी एक्स /नेफ्राक्स की सहायता से किया जाता है। उपरोक्त सारी प्रक्रिया संगत स्थान के पानी के साथ भी की जाती है। तत्पश्चात् सूक्ष्मदर्शी की सहायता से दोनों प्रकार की स्लाइडों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इस पूरी प्रक्रिया मे अत्यत सावधानी व स्वच्छता की आवश्यकता होती है। अम्ल पाचन विधि मे प्रबल अम्लो के वाष्प स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होने के साथ पर्यावरणीय प्रदूषण भी उत्पन्न करते है एवं कुछ डायटम (विशेष रूप से नवजात प्रावस्थाओं में) के नष्ट होने की संभावना भी होती है।

2 कभी-कभी डायटम की सख्या कम होती है। अत ऐसे मे त्रुटियों से बचने के लिए फुनायामा व अन्य (1987) ने नमूने विलयन को एक विशेष प्रकार की झिल्ली द्वारा छानने के पश्चात झिल्ली को अम्ल पाचन विधि द्वारा अभिकर्मित करने की सलाह दी है।

3 टेराजावा व टकटोरी ने 1980 मे ऊतक के समांगी सारभाग से, कोलायडीय सिलिका ग्रेडिएण्ट पर सेन्ट्रीफ्यूगेशन द्वारा डायटम के पृथक्करण की विधि का विकास किया एव इसे अम्ल पाचन विधि से बेहतर बताया।

4 अम्ल पाचन विधि के दुष्प्रभावो से बचने के लिए 1980 मे फुकई व अन्य ने एक नई विधि की खोज की। इसमे ऊतक को विभिन्न प्रकार से ज्ञात अभिकर्मको (जैसे सालुइन-350, एन सी एस , प्रोटोसाल इत्यादि जो चतुष्क अमोनियम हाइड्राक्साइड को टालूइन में घुलाने से बनते हैं) के साथ पराध्वनिक विधि द्वारा घुला लिया जाता है, तत्पश्चात विलयन को 2-3 बार सेन्ट्रीफ्यूज करके सान्द्रित अवशेष में डायटम की पहचान की जाती है। यह विधि अम्ल पाचन विधि की अपेक्षा प्रदूषण मुक्त है, प्रक्रिया मे समय कम लगता है, डायटम के नष्ट होने की सम्भावना अत्यंत कम होती है एवं संदूषण की सम्भावना भी नहीं होती है। इस विधि को और अधिक संवेदनशील बनाने के लिए मात्सुमोटो व फुकई (1993) ने ऊतको के विलयन के पराध्वनिक प्रदीपन के साथ-साथ गरम करने की भी सलाह दी है।

5 ऊतकों से डायटम के पृथक्करण हेतु वर्तमान में **'एन्जाइम पाचन विधि'** अत्यधिक सरल, संवेदनशील, एवं बहुप्रचलित है। इस विधि को 1993 मे कोबायाशी एवं इनके सहयोगियो ने विकसित की थी। इसमें प्रोटीन पाचक एन्जाइम 'प्रोटीनेज-के' व शोधक सोडियम डोडेसिल सल्फेट (एस डी एस) के साथ ऊतक को मिला लेते है। इस मिश्रण को 50 डिग्री सेन्टीग्रेड पर रात भर के लिए छोड देते है। फलस्वरूप ऊतक पूर्णतया घुल जाता है। अब इसे आसुत जल से तनु कर सेन्ट्रीफ्यूज मशीन की सहायता से विलयन की ऊपरी सतह को अलग कर फेंक देते हैं। निचले सतह को स्लाइड पर रखकर सुखा लेते है एवं डी पी एक्स / नेफ्राक्स से स्थापित कर लेते है। यही प्रक्रियाएं संगत स्थान के पानी के साथ भी करते है। तत्पश्चात् सूक्ष्मदर्शी की सहायता से दोनो प्रकार की स्लाइडो मे डायटम की तुलनात्मक पहचान की जाती है। इस विधि की सबसे बड़ी विशेषता प्रयुक्त जैव-रसायनों का डायटम के साथ-साथ अन्य प्लवकों के प्रति मृदु व्यवहार है, जिसके कारण इनकी क्षति बिल्कुल नहीं होती। अत डायटम के साथ अन्य प्लवकों को भी पहचान सूचक के रूप मे प्रयुक्त कर डूबकर हुई मृत्यु का आकलन और अधिक प्रभावी ढग से किया जा सकता है। वैसे तो अधिकतर डायटम प्रकाश सूक्ष्मदर्शी के कम आवर्धन पर ही स्पष्ट देखे जा सकते है परन्तु आवश्यक्तानुसार उच्च आवर्धन हेतु 'आयल इमर्सन' की स्थिति में भी देखे जा सकते हैं। सन् 1992 में पैकर व कैमरान ने डूबकर मरने के मामलों में डायटम की पहचान के लिए स्कैनिग इलेक्ट्रान माइक्रोस्कोप का प्रयोग किया। इससे अब तक ज्ञात अधिकतम आवर्धन (हजारगुना से लाख गुना तक) की सहायता से आकार मे अत्यंत सूक्ष्म अन्तर रखने वाले डायटम की जातियों/उपजातियों की भी सुस्पष्ट तरीके से पहचान की जा सकती है।

डायटम परीक्षण की उपयोगिता

यदि शव के संगत अंगों जैसे, यकृत, वृक्क, मस्तिष्क, तिल्ली एवं अस्थिमज्जा के ऊतकों मे प्रचुर संख्या मे डायटम पाये जाते है तो डूबने से हुई मृत्यु की पुष्टि की जा सकती है। यदि सगत स्थान से लिए गये पानी मे पाये जाने वाले डायटम व ऊतक में पाये जाने वाले डायटम आपस में आकार व प्रकार में समान है तो डूबने के स्थान एव डूबने से मरने के बारे मे अभिमत दिया जा सकता है।

नदी या नहर के कथित स्थान, व शव के ऊतक मे पाये जाने वाले डायटम मे किंचित भिन्नता हो सकती है, क्योंकि पानी के बहाव के साथ शव, डूबने वाले स्थान से काफी दूर चले जाते है। स्थान परिवर्तन के साथ डायटम की प्रजातिया भी बदलती रहती हैं। ऐसे मे नदी के बहाव के विपरीत दिशा मे कुछ किलोमीटर तक के स्थानों, विशेष तौर पर सेतु व घाट के पास, के पानी का भी नमूना लिया जाता है ताकि वास्तविक घटनास्थल का निर्धारण किया जा सके। वास्तविक घटनास्थल का निर्धारण न हो सकने की दशा में पीबॉडी (1985) ने सलाह दी है कि फेफड़े मे पाये जाने वाले डायटम को संगत स्थान के जलीय माध्यम का डायटम माना जा सकता है। वैसे अगर देखा जाये तो त्रुटियो से बचने के लिए सदैव फेफडों मे पाये जाने वाले डायटम को सगत स्थान के पानी मे पाये जाने वाला डायटम मानकर उनकी तुलना अन्य अगो (यकृत, वृक्क, मस्तिष्क, तिल्ली व अस्थिमज्जा) के ऊतक में पाये जाने वाले डायटम से की जानी चाहिए। ऐसे में डूबने के बारे मे ठोस अभिमत दिया जा सकता है।

कुछ वैज्ञानिको ने डायटम परीक्षण की विश्वसनीयता पर भी प्रश्नचिन्ह लगाया है। इनका मानना है कि लोग नदी, तालाब, आदि मे दातून करते हैं, नहाते हैं व पानी भी पीते है। अत डायटम शरीर में जा सकते हैं। वस्तुत ऐसी अवस्था मे डायटम आमाशय तक पहुच सकता है और यदि पेट में कोई घाव या अल्सर न हो तो ये रुधिर परिसचरण तत्र में प्रवेश नहीं कर सकते। पेट के घाव या अल्सर के कारण भी विभिन्न अगों मे पर्याप्त संख्या में डायटम के

पहुंचने की सभावना नगण्य होती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि विभिन्न ऊतकों के गहन परीक्षण से सदैव विश्वसनीय परिणाम प्राप्त किये जा सकते है, इसमें अनावश्यक संदेह करने का कोई औचित्य नहीं है।

कभी-कभी डूबकर हुई मृत्यु की दशा में भी डायटम नहीं पाये जाते हैं। सामान्यतया ऐसा नहीं होता है। फिर भी यह सम्भव है कि प्रश्नगत जलाशय में डायटम की कमी हो या अनुपस्थिति ही हो। डायटम की सख्यात्मक व गुणात्मक प्रचुरता पर पानी की गुणवत्ता, मौसम, प्रदूषण व अन्य भौगोलिक कारको का प्रभाव पडता है। इसके अतिरिक्त जीवन-चक्र के कारण भी कभी-कभी इनकी संख्या संक्षिप्त अवधि के लिए बहुत कम हो जाती है। प्रसंगवश उल्लेखनीय है कि बेल्जियम में 1909 के एक मामले में कोरिन व स्टाकिस एक मेडिकोलीगल जाँच के दौरान डूबे शवों से डायटम पाने में असफल रहे क्योंकि आर्डीनीस नदी (घटनास्थल) में इसकी मात्रा अत्यत कम थी। इसी प्रकार एक नौका दुर्घटना मे प्राप्त शवों से ऋतुओं व भौगोलिक कारकों में भिन्नता के कारण हेण्डी (1964) एक भी डायटम प्राप्त नहीं कर पाये थे। पैकर व कैमरॉन (1993) भी इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि डूबने से हुई मौत में डायटम तभी उपयोगी साक्ष्य होते हैं जब संगत जलीय माध्यम में इसकी प्रचुरता हो।

डायटम की कुछ आम किस्म की प्रजातियां अधिकांश जलस्रोतों में समान रूप से पायी जाती हैं। कभी-कभी जलस्रोतों मे डायटम की कुछ अभिलाक्षणिक प्रजातियां भी पायी जाती हैं जिनसे उनकी (जलस्रोतों की) पहचान किया जा सकता है। नदी मे पाये जाने वाले कुछ डायटम तालाब से भिन्न होते हैं। एक नदी के डायटम दूसरी नदी से भिन्न हो सकते हैं। जलस्रोतों के पारिस्थितिकी के अनुसार इनमें बडी विविधता पायी जाती है। अत वैज्ञानिक मुख्य-मुख्य जलस्रोतों मे प्राप्य डायटम का माहवार एव ऋतुवार गुणात्मक व सख्यात्मक अध्ययन कर एक ठोस आँकडा-आधार बना लेते हैं, जो घटनास्थल के निर्धारण मे सहायक होता है। इससे समय की बचत के साथ ही विश्लेषण में त्रुटियों के होने की संभावना भी अत्यंत क्षीण हो जाती है।

भारतवर्ष में भी डूबने से हुई संदिग्ध मौत के संदर्भ में कई वैज्ञानिकों द्वारा डायटम का परीक्षण किया गया है। इनमें डॉ भूषणराव, डॉ. भाष्कर, एवं डॉ मोहंती के नाम उल्लेखनीय हैं, परन्तु डायटम के आंकडा-आधार तैयार करने के बारे में कोई प्रभावशाली कार्य नहीं किये गए। इसको दृष्टिगत् रखते हुए विधि विज्ञान प्रयोगशाला, उ प्र., लखनऊ में डायटम परीक्षण सम्बंधी शोध व विकास कार्य किये जा रहे हैं। गोमती नदी में अनेक संवेदनशील स्थानों के पानी मे डायटम प्रचुर संख्या में पाये गये। सम्प्रति एक आँकडा-आधार तैयार करने का प्रयास किया जा रहा है ताकि डूबने से हुई मृत्यु के मामलों में परीक्षण कार्य शीघ्र व त्रुटिरहित ढंग से सम्पादित किया जा सके। गोमती नदी के अलावा यहां के कुछ तालाबों व नहरों के पानी का भी अध्ययन किया गया। इनके तुलनात्मक अध्ययन में डायटम के प्रकार में स्पष्ट भिन्नता देखी गयी। इसके अतिरिक्त प्रदेश की कुछ अन्य नदियों जैसे राप्ती (गोरखपुर), गंगा, यमुना एवं संगम (इलाहाबाद) व सरयू (फैजाबाद) के पानी का भी प्रारम्भिक अध्ययन किया गया। इन सभी में प्रचुर संख्या में डायटम पाये गये। सामान्य डायटम के अतिरिक्त उक्त नदियो में अभिलाक्षणिक डायटम भी पाये गये। आँकड़ा-आधार तैयार करने का कार्य प्रचलित है। भविष्य में यह आँकडे डूबने से हुई मृत्यु के मामलों में अत्यंत लाभदायक व महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगे।

संदर्भ

1 आयर, ए (1991) अमेरिकन जर्नल ऑफ फोरेन्सिक मेडिसिन एण्ड पैथालॉजी, **12** 213-218

2 इन्जे, जी (1942) जेन्ट्रलब्ल, अल्ग. पैथाल पैथाल एनट **79**, 176

3 कोरिन, जी व स्टाकिस, ई (1909) बुलेटिन डी एकडमी रायल डी मेडिसिन डी बेल्जिक, **23**, 42-48

4 कोबायाशी, एम व अन्य (1993) फोरेन्सिक साइस इन्टरनेशनल, **60**, 81-90

5 गेटलर, एओ (1921), ज अमे मेड एसो **77**, 1650-52

6 गार्डन, आई (1972) फोरेन्सिक साइंस, **1**, 389-95

7 टेराजावा, के व टकटोरी, टी (1980) फोरेन्सिक साइस इण्टरनेशनल, **16**, 63-66

8 टिम्परमैन, जे (1972) फोरेन्सिक साइस, **1**, 397-409

9 तमास्का, एल (1949) ओर्व, हेटिल **16**, 509-11

10 पैकर, जे वी कैमरॉन, जे एम (1992) जर्नल ऑफ फोरेन्सिक साइसेज, **37**, 860-66

11 पैकर, जे वी व कैमरॉन, जे एम (1993) मेडिसिन साइस एण्ड लॉ **33**, 291-99

12 पीबाडी, ए जे (1980) मेडिसिन साइस एण्ड लॉ, **20**, 254-61

13 पीबाडी, ए जे (1985) पी एचडी थीसीस

14 पोलानेन, एम एस (1997) जर्नल ऑफ फोरेन्सिक साइंसेज, **42**, 281-90

15 फुकई, वाई व अन्य (1980) फोरेन्सिक साइस इण्टरनेशनल, **16**, 67-74

16 फुनायामा, एम व अन्य (1987) फोरेन्सिक साइस इण्टरनेशनल, **34**, 175-82

17 भट्टाचार्जी, जे व अन्य (1996) मेडिसिन साइस एण्ड लॉ, **36**, 194-98

18 मात्सुमोटो, एच व फुकई, वाई (1993) फोरेन्सिक साइस इण्टरनेशनल, **60**, 91-95

19 रेवेनस्टार्फ, वी (1904) वीजी मेड आफ सनिटीट्सवेस, **28**, 274-79

20 रस्टन, डी जी (1961) मेडिकोलीगल जर्नल, **29**, 90-99

21 लूड्स बी व अन्य (1996) जर्नल ऑफ फोरेन्सिक साइंसेज, **41**, 425-28

22 लेब्रून, बी (1972) स्वाइन्स, **17**, 29-31

23 विगिन्स, ई ई व लूक, जे एल (1970) जे ओक्ला इस्टेट मेड एसो, **63**, 3-7

24 श्रीवास्तव, ए के व अन्य (1987) इण्डियन जर्नल ऑफ फोरेन्सिक साइंसेज, **1**, 127-31

25 हाफमैन (1986) देखे पीबाडी, ए जे (1980)

26 हेन्डी, एन आई (1964) फिशरी इन्वेस्टिगेशन्स सीरीज, पार्ट 5, बेसिलेरिओफाइसी, लन्दन, एचएमएसओ

27 हैन्डी, एन आई (1973) मेडिसिन साइंस एण्ड लॉ, **13**, 23-24

28 होम आफिस (1979) ड्राउनिंग स्टैटिस्टिक्स, इंग्लैण्ड/वेल्स 1977, लन्दन एचएमएसओ